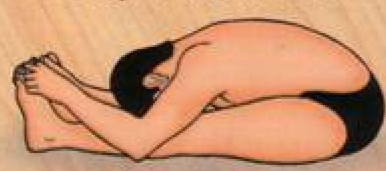
योगासन







संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-5.







अनुक्रम...

आध्यात्मिक विद्या के उदगाता

प्रातः स्मरणीय पूज्यपाद संत श्री आसाराम जी महाराज आज समग्र विश्व की चेतना के साथ एकात्मकता साधे हुए एक ऐसे ब्रह्मज्ञानी महापुरूष हैं कि जिनके बारे में कुछ लिखना कलम को शर्मिन्दा करना है। पूज्यश्री के लिए यह कहना कि उनका जन्म सिन्ध के नवाब जिले के बेराणी नामक गाँव में ई.स. 1941 में वि.सं. 1998 चैत वद 6 को हुआ था, यह कहना कि उनके पिताश्री बड़े जमींदार थे, यह कहना कि उन्होंने बचपन से साधना शुरू की थी और करीब तेईस साल की उम्र में उन्होंने आत्म-साक्षात्कार किया था – इत्यादि सब अपने मन को फुसलाने की कहानियाँ मात्र हैं। उनके विषय में कुछ भी कहना बहुत ज़्यादती है। मौन ही यहाँ परम भाषण है। सारे विश्व की चेतना के साथ जिनकी एकतानता है उनको भला किस रीति से स्थूल सम्बन्धों और परिवर्तनशील क्रियाओं के साथ बांधा जाये?

आज अमदावाद से करीब तीन-चार कि.मी. उत्तर में पवित्र सलिला साबरमति के किनारे ऋषि-मुनियों की तपोभूमि में धवल वस्त्रधारी परम पूज्यपाद संतश्री लाखों-लाखों मनुष्यों के जीवनरथ के पथ-प्रदर्शक बने हुए हैं। कुछ ही साल पहले साबरमति की जो कोतरें डरावनी और भयावह थीं, आज वही भूमि लाखों लोगों के लिए परम आश्रय और आनंददायी तीर्थभूमि बन चुकी है। हर रविवार और बुधवार को हजारों लोग आश्रम में आकर ब्रह्मनन्द में मस्त संतश्री के मुखारविंद से निसृत अमृत-वर्षा का लाभ पाते हैं। ध्यान और सत्संग का अमृतमय प्रसाद पाते हैं। पूज्यश्री की पावन कुटीर के सामने स्थित मनोकामनाओं को सिद्ध करने वाले कल्पवृक्ष समान बड़ बादशाह की परिक्रमा करते हैं ओर एक सप्ताह के लिए एक अदम्य उत्साह और आनन्द भीतर भरकर लौट जाते हैं।

कुछ साधक पूज्यश्री के पावन सान्निध्य में आत्मोथान की ओर अग्रसर होते हुए स्थायी रूप से आश्रम में ही रहते हैं। इस आश्रम से थोड़े ही दूरी पर स्थित महिला

आश्रम में पूज्यश्री प्रेरणा से और पूज्य माता जी के संचालन में रहकर कुछ साधिकाएँ आत्मोथान के मार्ग पर चल रही हैं।

अमदावाद और सूरत के अलावा दिल्ली, आगरा, वृन्दावन, हृषिकेश, इन्दौर, भोपाल, उज्जैन, रतलाम, जयपुर, उदयपुर, पुष्कर-अजमेर, जोधपुर, आमेट, सुमेरपरु, सागवाड़ा, राजकोट, भावनगर, हिम्मतनगर, विसनगर, लुणावाड़ा, वलसाड़, वापी, उल्हासनगर, औरंगाबाद, प्रकाशा, नाशिक एवं छोटे-मोटे कई स्थानों में भी मनोरम्य आश्रम बन चुके हैं और लाखों-लाखों लोग उनसे लाभान्वित हो रहे हैं। हर साल इन आश्रमों में मुख्य चार ध्यान योग साधना शिविर होते हैं। देश-विदेश के कई साधक-साधिकाएँ इन शिविरों में सम्मिलित होकर आध्यात्मिक साधना के राजमार्ग पर चल रहे हैं। उनकी संख्या दिनोदिन विशाल हो रही है। पूज्यश्री का प्रेम, आनन्द, उत्साह और आश्वासन से भरा प्रेरक मार्गदर्शन एवं स्नेहपूर्ण सान्निध्य उनके जीवन को पुलकित कर रहा है।

किसी को पूज्यश्री की किताब मिल जाती है, किसी को पूज्यश्री के प्रवचन की टेप सुनने को मिल जाती है, किसी को टी.वी. एवं चैनलों पर पूज्यश्री का दर्शन-सत्संग मिल जाता है. किसी को पूज्यश्री का कोई शिष्य, भक्त मिल जाता है और कोई श्रद्धावान तो पूज्यश्री का केवल नाम सुनकर ही आश्रम में चला जाता है और पूज्यश्री का आत्मिक प्रेम पाकर अनन्त विश्वचेतना के साथ तार जोड़ने का सदभागी होता है। वह भी आध्यात्मिक साधना का मार्ग खुल जाने से आनन्द से भर जाता है।

पूज्यश्री कहते हैं- तुम अपने को दीन-हीन कभी मत समझो। तुम आत्मस्वरूप से संसार की सबसे बड़ी सत्ता हो। तुम्हारे पैरों तले सूर्य और चन्द्र सहित हजारों पृथ्वियाँ दबी हुई हैं। तुम्हें अपने वास्तविक स्वरूप में जागने मात्र की देर है। अपने जीवन को संयम-नियम और विवेक वैराग्य से भरकर आत्माभिमुख बनाओ। अपने जीवन में ज़रा ध्यान की झलक लेकर तो देखो! आत्मदेव परमात्मा की ज़री झाँकी करके तो देखो! बस, फिर तो तुम अखण्ड ब्रह्माण्ड के नायक हो ही। किसने तुम्हें दीन-हीन बनाए रखा है? किसने तुम्हें अज्ञानी और मूढ बनाए रखा है? मान्यताओं ने ही ना...? तो छोड़ दो उन दुःखद मान्यताओं को। जाग जाओ अपने स्वरूप में। फिर देखो, सारा विश्व तुम्हारी सत्ता के आगे झुकने को बाध्य होता है कि नहीं? तुमको सिर्फ जगना है.... बस। इतना ही काफी है। तुम्हारे तीव्र पुरूषार्थ और सदगुरू के कृपा-प्रसाद से यह कार्य सिद्ध हो जाता है।

कुण्डलिनी प्रारम्भ में क्रियाएँ करके अन्नमय कोष को शुद्ध करती है। तुम्हारे शरीर को आवश्यक हों ऐसे आसन, प्राणायाम, मुद्राएँ आदि अपने आप होने लगते हैं। अन्नमय

कोष, प्राणमय कोष, मनोमय कोष की यात्रा करते हुए कुण्डलिनी जब आनन्दमय कोष में पहुँचती है तब असीम आनन्द की अनुभूति होने लगती है। तमाम शक्तियाँ, सिद्धियाँ, सामर्थ्य साधक में प्रकट होने लगता है। कुण्डलिनी जगते ही बुरी आदतें और व्यसन दूर होने लगते हैं।

इस योग को सिद्धयोग भी कहा जाता है। आनन्दमय कोष से भी आगे गुणातीत अवस्था करने के लिए इस सिद्धयोग का उपयोग हो सकता है तथा आत्मज्ञान पाकर जीवन्मुक्त के ऊँचे शिखर पर पहुँचने के लिए योगासन सहाय रूप हो सकते हैं।

- श्री योग वेदान्त सेवा समिति

अमदावाद आश्रम

स्वास्थ्य के लिए मंत्र

अच्युतानन्त गोविन्द नमोच्चारणभेषजात्।

नश्यन्ति सकला रोगाः सत्यं सत्यं वदाम्यहम्।।

हे अच्युत! हो अनन्त! हे गोविन्द! इस नामोच्चारणस्वरूप औषध से तमाम रोग नष्ट हो जाते हैं, यह मैं सत्य कहता हूँ, यह मैं सत्य कहता हूँ.... सत्य कहता हूँ।

प्रास्ताविक

साधारण मनुष्य अन्नमय, प्राणमय और मनोमय कोष में जीता है। जीवन की तमाम सुषुप्त शक्तियाँ नहीं जगाकर जीवन व्यर्थ खोता है। इन शक्तियों को जगाने में आपको आसन खूब सहाय रूप बनेंगे। आसन के अभ्यास से तन तन्दरूस्त, मन प्रसन्न और बुद्धि तीक्षण बनेगी। जीवन के हर क्षेत्र में सुखद स्वप्न साकार करने की कुँजी आपके आन्तर मन में छुपी हुई पड़ी है। आपका अदभुत सामर्थ्य प्रकट करने के लिए ऋषियों ने समाधी से सम्प्राप्त इन आसनों का अवलोकन किया है।

हजारों वर्ष की कसौटियों में कसे हुए, देश-विदेश में आदरणीय लोगों के द्वारा आदर पाये हुए इन आसनों की पुस्तिका देखने में छोटी है पर आपके जीवन को अति महान बनाने की कुँजियाँ रखती हुई आपके हाथ में पहुँच रही है।

इस पुस्तिका को बार-बार पढ़ो, आसनों का अभ्यास करो। हिम्मत रखो। अभ्यास का सातत्य जारी रखो। अदभुत लाभ होगा....... होगा........ अवश्य होगा। समिति की सेवा सार्थक बनेगी।

संत श्री आसारामजी बापू

ब्रह्मचर्य-रक्षा का मन्त्र

ॐ नमो भगवते महाबले पराक्रमाय मनोभिलाषितं मनः स्तंभ कुरू कुरू स्वाहा।

रोज दूध में निहार कर 21 बार इस मंत्र का जप करें और दूध पी लें। इससे ब्रह्मचर्य की रक्षा होती है। स्वभाव में आत्मसात कर लेने जैसा यह नियम है।

रात्रि में गोंद पानी में भिगोकर सुबह चाट लेने से वीर्यधातु पुष्ट होता है। ब्रह्मचर्य-रक्षा में सहायक बनता है।

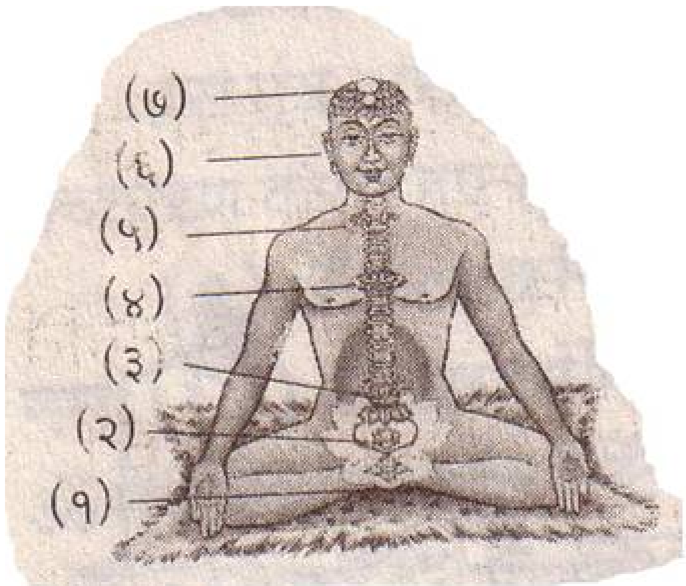
आसनों की प्रकिया में आने वाले कुछ शब्दों की समझ

रेचक का अर्थ है श्वास छोड़ना।

पूरक का अर्थ है श्वास भीतर लेना।

कुम्भक का अर्थ है श्वास को भीतर या बाहर रोक देना। श्वास लेकर भीतर रोकने की प्रक्रिया को आन्तर या आभ्यान्तर कुम्भक कहते हैं। श्वास को बाहर निकालकर फिर वापस न लेकर श्वास बाहर ही रोक देने की क्रिया को बहिर्कुम्भक कहते हैं।

चक्रः चक्र, आध्यात्मिक शक्तियों के केन्द्र हैं। स्थूल शरीर में चर्मचक्षु से वे दिखते नहीं, क्योंकि वे हमारे सूक्ष्म शरीर में स्थित होते हैं। फिर भी स्थूल शरीर के ज्ञानतन्तु,



स्नायु केन्द्र के साथ उनकी समानता जोड़कर उनका निर्देश किया जाता है। हमारे शरीर में ऐसे सात चक्र मुख्य हैं। 1. मूलाधारः गुदा के पास मेरूदण्ड के आखिरी मनके के पास होता है। 2. स्वाधिष्ठानः जननेन्द्रिय से ऊपर और नाभि से नीचे के भाग में होता है। 3. मणिपुरः नाभिकेन्द्र में होता है। 4. अनाहतः हृदय में होता है। 5. विशुद्धः कण्ठ में होता है। 6. आज्ञाचक्रः दो भौहों के बीच में होता है। 7. सहस्रारः मस्तिष्क के ऊपर के भाग में जहाँ चोटी रखी जाती है, वहाँ होता है।

नाड़ीः प्राण वहन करने वाली बारीक नलिकाओं को नाड़ी कहते हैं। उनकी संख्या 72000 बतायी जाती है। इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना ये तीन मुख्य हैं। उनमें भी सुषुम्ना सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है।

आवश्यक निर्देश

1. भोजन के छः घण्टे बाद, दूध पीने के दो घण्टे बाद या बिल्कुल खाली पेट ही आसन करें।

2. शौच-स्नानादि से निवृत्त होकर आसन किये जाये तो अच्छा है।

3. श्वास मुँह से न लेकर नाक से ही लेना चाहिए।

4. गरम कम्बल, टाट या ऐसा ही कुछ बिछाकर आसन करें। खुली भूमि पर बिना कुछ बिछाये आसन कभी न करें, जिससे शरीर में निर्मित होने वाला विद्युत-प्रवाह नष्ट न हो जायें।

5. आसन करते समय शरीर के साथ ज़बरदस्ती न करें। आसन कसरत नहीं है। अतः धैर्यपूर्वक आसन करें।

6. आसन करने के बाद ठंड में या तेज हवा में न निकलें। स्नान करना हो तो थोड़ी देर बाद करें।

7. आसन करते समय शरीर पर कम से कम वस्त्र और ढीले होने चाहिए।

8. आसन करते-करते और मध्यान्तर में और अंत में शवासन करके, शिथिलीकरण के द्वारा शरीर के तंग बने स्नायुओं को आराम दें।

9. आसन के बाद मूत्रत्याग अवश्य करें जिससे एकत्रित दूषित तत्त्व बाहर निकल जायें।

10. आसन करते समय आसन में बताए हुए चक्रों पर ध्यान करने से और मानसिक जप करने से अधिक लाभ होता है।

11. आसन के बाद थोड़ा ताजा जल पीना लाभदायक है. ऑक्सिजन और हाइड्रोजन में विभाजित होकर सन्धि-स्थानों का मल निकालने में जल बहुत आवश्यक होता है।

12. स्त्रियों को चाहिए कि गर्भावस्था में तथा मासिक धर्म की अवधि में वे कोई भी आसन कभी न करें।

13. स्वास्थ्य के आकांक्षी हर व्यक्ति को पाँच-छः तुलसी के पत्ते प्रातः चबाकर पानी पीना चाहिए। इससे स्मरणशक्ति बढ़ती है, एसीडीटी एवं अन्य रोगों में लाभ होता है।

योगासन

पद्मासन या कमलासन

इस आसन में पैरों का आधार पद्म अर्थात कमल जैसा बनने से इसको पद्मासन या कमलासन कहा जाता है। ध्यान आज्ञाचक्र में अथवा अनाहत चक्र में। श्वास रेचक, कुम्भक, दीर्घ, स्वाभाविक।

विधिः बिछे हुए आसन के ऊपर स्वस्थ होकर बैठें। रेचक करते करते दाहिने पैर को मोड़कर बाँई जंघा पर रखें। बायें पैर को मोड़कर दाहिनी जंघा पर रखें। अथवा पहले बायाँ पैर और बाद में दाहिना पैर भी रख सकते हैं। पैर के तलुवे ऊपर की ओर और एड़ी नाभि के नीचे रहे। घुटने ज़मीन से लगे रहें। सिर, गरदन, छाती, मेरूदण्ड आदि पूरा भाग सीधा और तना हुआ रहे। दोनों हाथ घुटनों के ऊपर ज्ञानमुद्रा में रहे। (अँगूठे को तर्जनी अँगुली के नाखून से लगाकर शेष तीन अँगुलियाँ सीधी रखने से ज्ञानमुद्रा बनती है।) अथवा बायें हाथ को गोद में रखें। हथेली ऊपर की और रहे। उसके ऊपर उसी प्रकार दाहिना हाथ रखें। दोनों हाथ की अँगुलियाँ परस्पर लगी रहेंगी। दोनों हाथों को मुट्ठी बाँधकर घुटनों पर भी रख सकते हैं।



(पद्मासन या कमलासन)

रेचक पूरा होने के बाद कुम्भक करें। प्रारंभ में पैर जंघाओं के ऊपर पैर न रख सकें तो एक ही पैर रखें। पैर में झनझनाहट हो, क्लेश हो तो भी निराश न होकर अभ्यास चालू रखें। अशक्त या रोगी को चाहिए कि वह ज़बरदस्ती पद्मासन में न बैठे। पद्मासन

सशक्त एवं निरोगी के लिए है। हर तीसरे दिन समय की अवधि एक मिनट बढ़ाकर एक घण्टे तक पहुँचना चाहिए।

दृष्टि नासाग्र अथवा भ्रूमध्य में स्थिर करें। आँखें बंद, खुली या अर्ध खुली भी रख सकते हैं। शरीर सीधा और स्थिर रखें। दृष्टि को एकाग्र बनायें।

भावना करें कि मूलाधार चक्र में छुपी हुई शक्ति का भण्डार खुल रहा है। निम्न केन्द्र में स्थित चेतना तेज और औज़ के रूप में बदलकर ऊपर की ओर आ रही है। अथवा, अनाहत चक्र (हृदय) में चित्त एकाग्र करके भावना करें कि हृदयरूपी कमल में से सुगन्ध की धाराएँ प्रवाहित हो रही हैं। समग्र शरीर इन धाराओं से सुगन्धित हो रहा है।

लाभः प्राणायाम के अभ्यासपूर्वक यह आसन करने से नाड़ीतंत्र शुद्ध होकर आसन सिद्ध होता है। विशुद्ध नाड़ीतंत्र वाले योगी के विशुद्ध शरीर में रोग की छाया तक नहीं रह सकती और वह स्वेच्छा से शरीर का त्याग कर सकता है।

पद्मासन में बैठने से शरीर की ऐसी स्थिति बनती है जिससे श्वसन तंत्र, ज्ञानतंत्र और रक्ताभिसरणतंत्र सुव्यवस्थित ढंग के कार्य कर सकते हैं। फलतः जीवनशक्ति का विकास होता है। पद्मासन का अभ्यास करने वाले साधक के जीवन में एक विशेष प्रकार की आभा प्रकट होती है। इस आसन के द्वारा योगी, संत, महापुरूष महान हो गये हैं।

पद्मासन के अभ्यास से उत्साह में वृद्धि होती है। स्वभाव में प्रसन्नता बढ़ती है। मुख तेजस्वी बनता है। बुद्धि का अलौकिक विकास होता है। चित्त में आनन्द-उल्लास रहता है। चिन्ता, शोक, दुःख, शारीरिक विकार दब जाते हैं। कुविचार पलायन होकर सुविचार प्रकट होने लगते हैं। पद्मासन के अभ्यास से रजस और तमस के कारण व्यग्र बना हुआ चित्त शान्त होता है। सत्त्वगुण में अत्यंत वृद्धि होती है। प्राणायाम, सात्त्विक मिताहार और सदाचार के साथ पद्मासन का अभ्यास करने से अंतःस्रावी ग्रंथियों को विशुद्ध रक्त मिलता है। फलतः व्यक्ति में कार्यशक्ति बढ़ने से भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास शीघ्र होता है। बौद्धिक-मानसिक कार्य करने वालों के लिए, चिन्तन मनन करने वालों के लिए एव विद्यार्थियों के लिए यह आसन खूब लाभदायक है। चंचल मन को स्थिर करने के लिए एवं वीर्यरक्षा के लिए या आसन अद्वितिय है।

श्रम और कष्ट रहित एक घण्टे तक पद्मासन पर बैठने वाले व्यक्ति का मनोबल खूब बढ़ता है। भाँग, गाँजा, चरस, अफीम, मदिरा, तम्बाकू आदि व्यसनों में फँसे हुए व्यक्ति

यदि इन व्यसनों से मुक्त होने की भावना और दृढ़ निश्चय के साथ पद्मासन का अभ्यास करें तो उनके दुर्व्यसन सरलता से और सदा के लिए छूट जाते हैं। चोरी, जुआ, व्यभिचार या हस्तदोष की बुरी आदत वाले युवक-युवतियाँ भी इस आसन के द्वारा उन सब कुसंस्कारों से मुक्त हो सकते हैं।

कुष्ठ, रक्तपित्त, पक्षाघात, मलावरोध से पैदा हुए रोग, क्षय, दमा, हिस्टीरिया, धातुक्षय, कैन्सर, उदरकृमि, त्वचा के रोग, वात-कफ प्रकोप, नपुंसकत्व, वन्धव्य आदि रोग पद्मासन के अभ्यास से नष्ट हो जाते हैं। अनिद्रा के रोग के लिए यह आसन रामबाण इलाज है। इससे शारीरिक मोटापन कम होता है। शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य की सुरक्षा के लिए यह आसन सर्वोत्तम है।

पद्मासन में बैठकर अश्विनी मुद्रा करने अर्थात गुदाद्वार का बार-बार संकोच प्रसार करने से अपानवायु सुषुम्ना में प्रविष्ट होता है। इससे काम विकार पर जय प्राप्त होने लगती है। गुह्योन्द्रिय को भीतर की ओर सिकोड़ने से अर्थात योनिमुद्रा या वज्रोली करने से वीर्य उर्ध्वगामी होता है। पद्मासन में बैठकर उड्डीयान बन्ध, जालंधर बन्ध तथा कुम्भक करके छाती एवं पेट को फुलाने कि क्रिया करने से वक्षशुद्धि एवं कण्ठशुद्धि होती है। फलतः भूख खुलती है, भोजन सरलता से पचता है, जल्दी थकान नहीं होती। स्मरणशक्ति एवं आत्मबल में वृद्धि होती है।

यम-नियमपूर्वक लम्बे समय तक पद्मासन का अभ्यास करने से उष्णता प्रकट होकर मूलाधार चक्र में आन्दोलन उत्पन्न होते हैं। कुण्डलिनी शक्ति जागृत होने की भूमिका बनती है। जब यह शक्ति जागृत होती है तब इस सरल दिखने वाले पद्मासन की वास्तविक महिमा का पता चलता है। घेरण्ड, शाण्डिल्य तथा अन्य कई ऋषियों ने इस आसन की महिमा गायी है। ध्यान लगाने के लिए यह आसन खूब लाभदायक है।

इदं पद्मासनं प्रोक्तं सर्वव्याधिविनाशम्।

दुर्लभं येन केनापि धीमता लभ्यते भुवि।।

इस प्रकार सर्व व्याधियों को विनष्ट करने वाले पद्मासन का वर्णन किया। यह दुर्लभ आसन किसी विरले बुद्धिमान पुरूष को ही प्राप्त होता है।

(हठयोगप्रदीपिका, प्रथमोपदेश)

सिद्धासन

पद्मासन के बाद सिद्धासन का स्थान आता है। अलौकिक सिद्धियाँ प्राप्त करने वाला होने के कारण इसका नाम सिद्धासन पड़ा है। सिद्ध योगियों का यह प्रिय आसन है। यमों में ब्रह्मचर्य श्रेष्ठ है, नियमों में शौच श्रेष्ठ है वैसे आसनों में सिद्धासन श्रेष्ठ है।

ध्यान आज्ञाचक्र में और श्वास, दीर्घ, स्वाभाविक।


(सिद्धासन)

विधिः आसन पर बैठकर पैर खुले छोड़ दें। अब बायें पैर की एड़ी को गुदा और जननेन्द्रिय के बीच रखें। दाहिने पैर की एड़ी को जननेन्द्रिय के ऊपर इस प्रकार रखें जिससे जननेन्द्रिय और अण्डकोष के ऊपर दबाव न पड़े। पैरों का क्रम बदल भी सकते हैं। दोनों पैरों के तलुवे जंघा के मध्य भाग में रहें। हथेली ऊपर की ओर रहे इस प्रकार दोनों हाथ एक दूसरे के ऊपर गोद में रखें। अथवा दोनों हाथों को दोनो घुटनों के ऊपर ज्ञानमुद्रा में रखें। आँखें खुली अथवा बन्द रखें। श्वासोच्छोवास आराम से स्वाभाविक चलने दें। भ्रूमध्य में, आज्ञाचक्र में ध्यान केन्द्रित करें। पाँच मिनट तक इस आसन का अभ्यास कर सकते हैं। ध्यान की उच्च कक्षा आने पर शरीर पर से मन की पकड़ छूट जाती है।

लाभः सिद्धासन के अभ्यास से शरीर की समस्त नाड़ियों का शुद्धिकरण होता है। प्राणतत्त्व स्वाभाविकतया ऊर्ध्वगति को प्राप्त होता है। फलतः मन को एकाग्र करना सरल बनता है।

पाचनक्रिया नियमित होती है। श्वास के रोग, हृदय रोग, जीर्णज्वर, अजीर्ण, अतिसार, शुक्रदोष आदि दूर होते हैं। मंदाग्नि, मरोड़ा, संग्रहणी, वातविकार, क्षय, दमा, मधुप्रमेह, प्लीहा की वृद्धि आदि अनेक रोगों का प्रशमन होता है। पद्मासन के अभ्यास से जो रोग दूर होते हैं वे सिद्धासन के अभ्यास से भी दूर होते हैं।

ब्रह्मचर्य-पालन में यह आसन विशेष रूप से सहायक होता है। विचार पवित्र बनते हैं। मन एकाग्र होता है। सिद्धासन का अभ्यासी भोग-विलास से बच सकता है। 72 हजार नाड़ियों का मल इस आसन के अभ्यास से दूर होता है। वीर्य की रक्षा होती है। **स्वप्नदोष के रोगी को यह आसन अवश्य करना चाहिए।**

योगीजन सिद्धासन के अभ्यास से वीर्य की रक्षा करके प्राणायाम के द्वारा उसको मस्तिष्क की ओर ले जाते हैं जिससे वीर्य ओज तथा मेधाशक्ति में परिणत होकर दिव्यता का अनुभव करता है। मानसिक शक्तियों का विकास होता है।

कुण्डलिनी शक्ति जागृत करने के लिए यह आसन प्रथम सोपान है।

सिद्धासन में बैठकर **जो कुछ पढ़ा जाता है वह अच्छी तरह याद रह जाता है।** विद्यार्थियों के लिए यह आसन विशेष लाभदायक है। जठराग्नि तेज होती है। दिमाग स्थिर बनता है जिससे स्मरणशक्ति बढ़ती है।

आत्मा का ध्यान करने वाला योगी यदि मिताहारी बनकर बारह वर्ष तक सिद्धासन का अभ्यास करे तो सिद्धि को प्राप्त होता है। सिद्धासन सिद्ध होने के बाद अन्य आसनों का कोई प्रयोजन नहीं रह जाता। सिद्धासन से केवल या केवली कुम्भक सिद्ध होता है। छः मास में भी केवली कुम्भक सिद्ध हो सकता है और ऐसे सिद्ध योगी के दर्शन-पूजन से पातक नष्ट होते हैं, मनोकामना पूर्ण होती है। सिद्धासन के प्रताप से निर्बीज समाधि सिद्ध हो जाती है। मूलबन्ध, उड्डीयान बन्ध और जालन्धर बन्ध अपने आप होने लगते हैं।

सिद्धासन जैसा दूसरा आसन नहीं है, केवली कुम्भक के समान प्राणायाम नहीं है, खेचरी मुद्रा के समान अन्य मुद्रा नहीं है और अनाहत नाद जैसा कोई नाद नहीं है।

सिद्धासन महापुरूषों का आसन है। सामान्य व्यक्ति हठपूर्वक इसका उपयोग न करें, अन्यथा लाभ के बदले हानि होने की सम्भावना है।

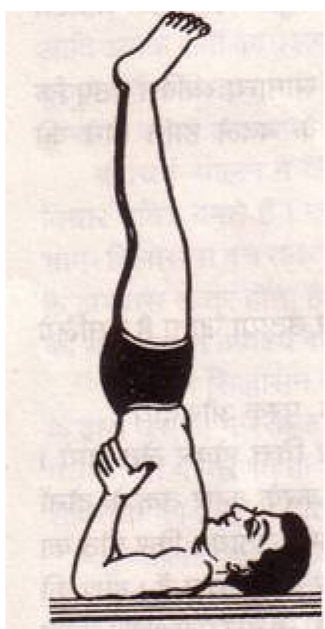
सर्वांगासन

भूमि पर सोकर शरीर को ऊपर उठाया जाता है इसलिए इसको सर्वांगासन कहते हैं।

ध्यान विशुद्धाख्य चक्र में, श्वास रेचक, पूरक और दीर्घ।

विधिः भूमि पर बिछे हुए आसन पर चित्त होकर लेट जाएँ। श्वास को बाहर निकाल कर अर्थात रेचक करके कमर तक के दोनों पैर सीधे और परस्पर लगे हुए रखकर ऊपर उठाएं। फिर पीठ का भाग भी ऊपर उठाएं। दोनों हाथों से कमर को आधार दें। हाथ की कुहनियाँ भूमि से लगे रहें। गरदन और कन्धे के बल पूरा शरीर ऊपर की और सीधा खड़ा कर दें। ठोडी छाती के साथ चिपक जाए। दोनों पैर आकाश की ओर रहें। दृष्टी दोनों पैरों के अंगूठों की ओर रहे। अथवा आँखें बन्द करके चित्तवृत्ति को कण्ठप्रदेश में विशुद्धाख्य चक्र में स्थिर करें। पूरक करके श्वास को दीर्घ, सामान्य चलने दें।

इस आसन का अभ्यास दृढ़ होने के बाद दोनों पैरों को आगे पीछे झुकाते हुए, जमीन को लगाते हुए अन्य आसन भी हो सकते हैं। सर्वांगासन की स्थिति में दोनों पैरों को जाँघों पर लगाकर पद्मासन भी किया जा सकता है।



(सर्वांगासन)

प्रारम्भ में तीन से पाँच मिनट तक यह आसन करें। अभ्यासी तीन घण्टे तक इस आसन का समय बढ़ा सकते हैं।

लाभः सर्वांगासन के नित्य अभ्यास से जठराग्नि तेज होती है। साधक को अपनी रूचि के अनुसार भोजन की मात्रा बढ़ानी चाहिए। सर्वांगासन के अभ्यास से शरीर की त्वचा लटकने नहीं लगती तथा शरीर में झुर्रियाँ नहीं पड़तीं। बाल सफेद होकर गिरते नहीं। हर रोज़ एक प्रहर तक सर्वांगासन का अभ्यास करने से मृत्यु पर विजय मिलती है, शरीर में सामर्थ्य बढ़ता है। तीनों दोषों का शमन होता है। वीर्य की ऊर्ध्वगति होकर अन्तःकरण शुद्ध होता है। मेधाशक्ति बढ़ती है, चिर यौवन की प्राप्ति होती है।

इस आसन से थायराइड नामक अन्तःग्रन्थि की शक्ति बढ़ती है। वहाँ रक्तसंचार तीव्र गति से होने लगता है, इससे उसे पोषण मिलता है। थायराइड के रोगी को इस आसन से अदभुत लाभ होता है। लिवर और प्लीहा के रोग दूर होते हैं। स्मरणशक्ति बढ़ती है। मुख पर से मुँहासे एवं अन्य दाग दूर होकर मुख तेजस्वी बनता है। जठर एवं नीचे उतरी हुई आँतें अपने मूल स्थान पर स्थिर होती हैं। पुरूषातन ग्रन्थि पर सर्वांगासन का अच्छा प्रभाव पड़ता है। स्वप्नदोष दूर होता है। मानसिक बौद्धिक प्रवृत्ति करने वालों को तथा विशेषकर विद्यार्थियों को यह आसन अवश्य करना चाहिए।

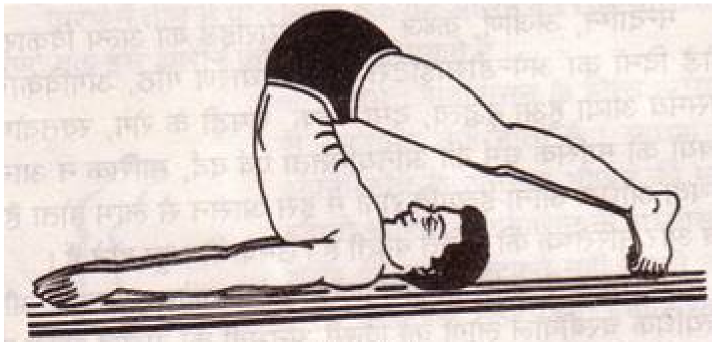
मन्दाग्नि, अजीर्ण, कब्ज, अर्श, थायराइड का अल्प विकास, थोड़े दिनों का अपेन्डीसाइटिस और साधारण गाँठ, अंगविकार, असमय आया हुआ वृद्धत्व, दमा, कफ, चमड़ी के रोग, रक्तदोष, स्त्रियों को मासिक धर्म की अनियमितता एवं दर्द, मासिक न आना अथवा अधिक आना इत्यादि रोगों में इस आसन से लाभ होता है। नेत्र और मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है। उनके रोग दूर होते हैं।

थायराइड के अति विकासवाले, खूब कमजोर हृदयवाले और अत्यधिक चर्बीवाले लोगों को किसी अनुभवी की सलाह लेकर ही सर्वांगासन करना चाहिए।

शीर्षासन करने से जो लाभ होता है वे सब लाभ सर्वांगासन और पादपश्चिमोत्तानसन करने से मिल जाते हैं। शीर्षासन में गफलत होने से जो हानि होती है वैसी हानि होने की संभावना सर्वांगासन और पादपश्चिमोत्तानासन में नहीं है।

हलासन

इस आसन में शरीर का आकार हल जैसा बनता है इसलिए इसको हलासन कहा जाता है।



(हलासन)

ध्यान विशुद्धाख्या चक्र में। श्वास रेचक और बाद में दीर्घ।

विधिः भूमि पर बिछे हुए आसन पर चित्त होकर लेट जाएँ। दोनों हाथ शरीर को लगे रहें। अब रेचक करके श्वास को बाहर निकाल दें। दोनों पैरों को एक साथ धीरे-धीरे ऊँचे करते जायें। आकाश की ओर पूरे उठाकर फिर पीछे सिर के तरफ झुकायें। पैर बिल्कुल तने हुए रखकर पंजे ज़मीन पर लगायें। ठोड़ी छाती से लगी रहे। चित्तवृत्ति को विशुद्धाख्या चक्र में स्थिर करें। दो-तीन मिनट से लेकर बीस मिनट तक समय की अवधि बढ़ा सकते हैं।

लाभः हलासन के अभ्यास से अजीर्ण, कब्ज, अर्श, थायराइड का अल्प विकास, अंगविकार, असमय वृद्धत्व, दमा, कफ, रक्तविकार आदि दूर होते हैं। इस आसन से लिवर अच्छा होता है। छाती का विकास होता है। श्वसनक्रिया तेज होकर ऑक्सीजन से रक्त शुद्ध बनता है। गले के दर्द, पेट की बीमारी, संधिवात आदि दूर होते हैं। पेट की चरबी कम होती है। सिरदर्द दूर होता है। वीर्यविकार निर्मूल होता है। खराब विचार बन्द होते हैं। नाड़ी तंत्र शुद्ध होता है। शरीर बलवान और तेजस्वी बनता है। गर्भिणी स्त्रियों के सिवा हर एक को यह आसन करना चाहिए।

रीढ़ में कठोरता होना यह वृद्धावस्था का चिह्न है। हलासन से रीढ़ लचीली बनती है, इससे युवावस्था की शक्ति, स्फूर्ति, स्वास्थ्य और उत्साह बना रहता है। मेरूदण्ड

सम्बन्धी नाड़ियों के स्वास्थ्य की रक्षा होकर वृद्धावस्था के लक्षण जल्दी नहीं आते। जठर की नाड़ियों को शक्ति प्राप्त होती है।

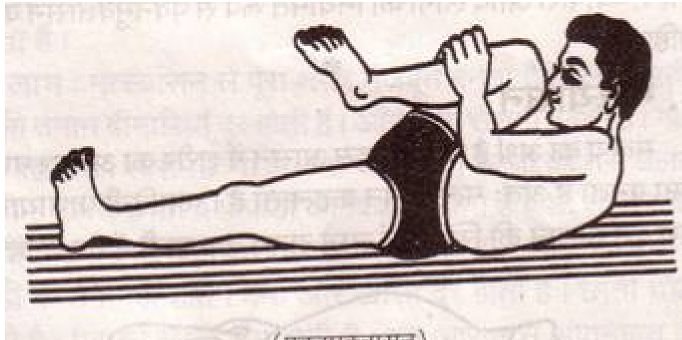
जठर की माँसपेशियाँ तथा पाचनतंत्र के अंगों की नाड़ियों की दुर्बलता के कारण अगर मंदाग्नि एवं कब्ज हो तो हलासन से दूर होते हैं। कमर, पीठ एवं गरदन के रोग नष्ट होते हैं। लिवर और प्लीहा बढ़ गए हों तो हलासन से सामान्य अवस्था में आ जाते हैं। काम केन्द्र की शक्ति बढ़ती है। अपानशक्ति का उत्थान होकर उदानरूपी अग्नि का योग होने से वीर्यशक्ति ऊर्ध्वगामी बनती है। हलासन से वीर्य का स्तंभन होता है। यह आसन अण्डकोष की वृद्धि, पेन्क्रियास, अपेन्डिक्स आदि को ठीक करता है। थायराइड ग्रन्थि की क्रियाशीलता बढ़ती है। ध्यान करने से विशुद्ध चक्र जागृत हो जाता है।

पवनमुक्तासन

शरीर में स्थित पवन (वायु) यह आसन करने से मुक्त होता है। इसलिए इसे पवनमुक्तासन कहा जाता है।

ध्यान मणिपुर चक्र में। श्वास पहले पूरक फिर कुम्भक और रेचक।

विधिः भूमि पर बिछे हुए आसन पर चित्त होकर लेट जायें। पूरक करके फेफड़ों में श्वास भर लें। अब किसी भी एक पैर को घुटने से मोड़ दें। दोनों हाथों की अंगुलियों को परस्पर मिलाकर उसके द्वारा मोड़े हुए घुटनों को पकड़कर पेट के साथ लगा दें। फिर सिर को ऊपर उठाकर मोड़े हुए घुटनों पर नाक लगाएं। दूसरा पैर ज़मीन पर सीधा रहे। इस क्रिया के दौरान श्वास को रोककर कुम्भक चालू रखें। सिर और मोड़ा हुआ पैर भूमि पर पूर्ववत् रखने के बाद ही रेचक करें। दोनों पैरों को बारी-बारी से मोड़कर यह क्रिया करें। दोनों पैर एक साथ मोड़कर भी यह आसन हो सकता है।



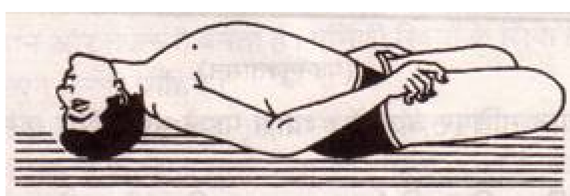
(पवनमुक्तासन)

लाभः पवनमुक्तासन के नियमित अभ्यास से पेट की चरबी कम होती है। पेट की वायु नष्ट होकर पेट विकार रहित बनता है। कब्ज दूर होता है। पेट में अफारा हो तो इस आसन से लाभ होता है। प्रातःकाल में शौचक्रिया ठीक से न होती हो तो थोड़ा पानी पीकर यह आसन 15-20 बार करने से शौच खुलकर होगा।

इस आसन से स्मरणशक्ति बढ़ती है। बौद्धिक कार्य करने वाले डॉक्टर, वकील, साहित्यकार, विद्यार्थी तथा बैठकर प्रवृत्ति करने वाले मुनीम, व्यापारी आदि लोगों को नियमित रूप से पवनमुक्तासन करना चाहिए।

मत्स्यासन

मत्स्य का अर्थ है मछली। इस आसन में शरीर का आकार मछली जैसा बनता है अतः मत्स्यासन कहलाता है। प्लाविनी प्राणायाम के साथ इस आसन की स्थिति में लम्बे समय तक पानी में तैर सकते हैं।



(मत्स्यासन)

ध्यान विशुद्धाख्या चक्र में। श्वास पहले रेचक, बहिर्कुम्भक, फिर पूरक और रेचक।

विधिः भूमि पर बिछे हुए आसन पर पद्मासन लगाकर सीधे बैठ जायें। फिर पैरों को पद्मासन की स्थिति में ही रखकर हाथ के आधार से सावधानी पूर्वक पीछे की ओर चित्त होकर लेट जायें। रेचक करके कमर को ऊपर उठायें। घुटने, नितंब और मस्तक के शिखा स्थान को भूमि के स्थान लगायें रखें। शिखास्थान के नीचे कोई नरम कपड़ा

अवश्य रखें। बायें हाथ से दाहिने पैर का अंगूठा और दाहिने हाथ से बायें पैर का अंगूठा पकड़ें। दोनों कुहनियाँ ज़मीन को लगायें रखें। कुम्भक की स्थिति में रहकर दृष्टि को पीछे की ओर सिर के पास ले जाने की कोशिश करें। दाँत दबे हुए और मुँह बन्द रखें। एक मिनट से प्रारम्भ करके पाँच मिनट तक अभ्यास बढ़ायें। फिर हाथ खोलकर, कमर भूमि को लगाकर सिर ऊपर उठाकर बैठ जायें। पूरक करके रेचक करें।

पहले भूमि पर लेट कर फिर पद्मासन लगाकर भी मत्स्यासन हो सकता है।

लाभः म्त्स्यासन से पूरा शरीर मजबूत बनता है। गला, छाती, पेट की तमाम बीमारियाँ दूर होती हैं। आँखों की रोशनी बढ़ती है। गला साफ रहता है। श्वसनक्रिया ठीक से चलती है। कन्धों की नसें उल्टी मुड़ती हैं इससे छाती व फेफड़ों का विकास होता है। पेट साफ रहता है। आँतों का मैल दूर होता है। रक्ताभिसरण की गति बढ़ती है। फलतः चमड़ी के रोग नहीं होते। दमा और खाँसी दूर होती है। छाती चौड़ी बनती है। पेट की चरबी कम होती है। इस आसन से अपानवायु की गति नीचे की ओर होने से मलावरोध दूर होता है। थोड़ा पानी पीकर यह आसन करने से शौच-शुद्धि में सहायता मिलती है।

मत्स्यासन से स्त्रियों के मासिकधर्म सम्बन्धी सब रोग दूर होते हैं। मासिकस्राव नियमित बनता है।

भुजंगासन

इस आसन में शरीर की आकृति फन उठाये हुए भुजंग अर्थात सर्प जैसी बनती है इसलिए इसको भुजंगासना कहा जाता है।



(भुजंगासन या सर्पासन)

ध्यान विशुद्धाख्या चक्र में। श्वास ऊपर उठाते वक्त पूरक और नीचे की ओर जाते समय रेचक।

विधिः भूमि पर बिछे हुए कम्बल पर पेट के बल उल्टे होकर लेट जायें। दोनों पैर और पंजे परस्पर मिले हुए रहें। पैरों के अंगूठों को पीछे की ओर खींचें। दोनों हाथ सिर के तरफ लम्बे कर दें। पैरों के अंगूठे, नाभि, छाती, ललाट और हाथ की हथेलियाँ भूमि पर एक सीध में रखें।

अब दोनों हथेलियों को कमर के पास ले जायें। सिर और कमर ऊपर उठाकर जितना हो सके उतने पीछे की ओर मोड़ें। नाभि भूमि से लगी रहे। पूरे शरीर का वजन हाथ के पंजे पर आएगा। शरीर की स्थिति कमान जैसी बनेगी। मेरूदण्ड के आखिरी भाग पर दबाव केन्द्रित होगा। चित्तवृत्ति को कण्ठ में और दृष्टि को आकाश की तरफ स्थिर करें।

20 सेकण्ड तक यह स्थिति रखें। बाद में धीरे-धीरे सिर को नीचे ले आयें। छाती भूमि पर रखें। फिर सिर को भूमि से लगने दें। आसन सिद्ध हो जाने के बाद आसन करते समय श्वास भरके कुम्भक करें। आसन छोड़ते समय मूल स्थिति में आने के बाद श्वास को खूब धीरे-धीरे छोड़ें। हर रोज एक साथ 8-10 बार यह आसन करें।

लाभः घेरंड संहिता में इसका लाभ बताते हुए कहा है- भुजंगासन से जठराग्नि प्रदीप्त होती है, सर्व रोगों का नाश होता है और कुण्डलिनी जागृत होती है।

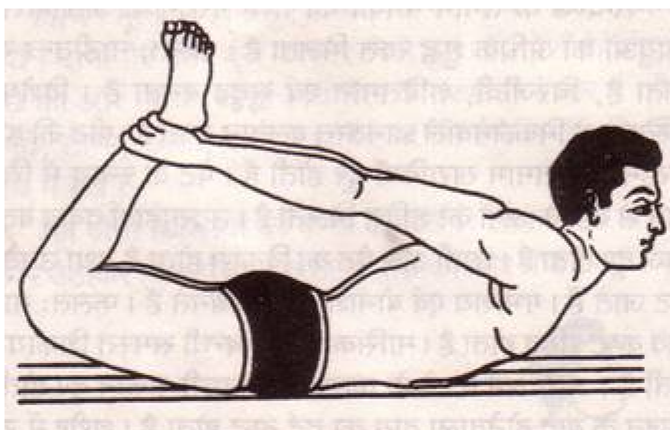
मेरूदण्ड के तमाम मनकों को तथा गरदन के आसपास वाले स्नायुओं को अधिक शुद्ध रक्त मिलता है। फलतः नाड़ी तंत्र सचेत बनता है, चिरंजीवी, शक्तिमान एवं सुदृढ़ बनता है। विशेषकर मस्तिष्क से निकलने वाले ज्ञानतंतु बलवान बनते हैं। पीठ की हड्डियों में रहने वाली तमाम खराबियाँ दूर होती हैं। पेट के स्नायु में खिंचाव आने से वहाँ के अंगों को शक्ति मिलती है। उदरगुहा में दबाव बढ़ने से कब्ज दूर होता है। छाती और पेट का विकास होता है तथा उनके रोग मिट जाते हैं। गर्भाशय एवं बोनाशय अच्छे बनते हैं। फलतः मासिकस्राव कष्टरहित होता है। मासिक धर्म सम्बन्धी समस्त शिकायतें दूर होती हैं। अति श्रम करने के कारण लगने वाली थकान दूर होती है। भोजन के बाद होने वाले वायु का दर्द नष्ट होता है। शरीर में स्फूर्ति आती है। कफ-पितवालों के लिए यह आसन लाभदायी है। भुजंगासन करने से हृदय मजबूत बनता है। मधुप्रमेह और उदर के

रोगों से मुक्ति मिलती है। प्रदर, अति मासिकस्राव तथा अल्प मासिकस्राव जैसे रोग दूर होते हैं।

इस आसन से मेरूदण्ड लचीला बनता है। पीठ में स्थित इड़ा और पिंगला नाड़ियों पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। कुण्डलिनी शक्ति जागृत करने के लिय यह आसन सहायक है। अमाशय की माँसपेशियों का अच्छा विकास होता है। थकान के कारण पीठ में पीड़ा होती हो तो सिर्फ एक बार ही यह आसन करने से पीड़ा दूर होती है। मेरूदण्ड की कोई हड्डी स्थानभ्रष्ट हो गई हो तो भुजंगासन करने से यथास्थान में वापस आ जाती है।

धनुरासन

इस आसन में शरीर की आकृति खींचे हुए धनुष जैसी बनती है अतः इसको धनुरासन कहा जाता है।



(धनुरासन)

ध्यान मणिपुर चक्र में। श्वास नीचे की स्थिति में रेचक और ऊपर की स्थिति में पूरक।

विधिः भूमि पर बिछे हुए कम्बल पर पेट के बल उल्टे होकर लेट जायें। दोनों पैर परस्पर मिले हुए रहें। अब दोनों पैरों को घुटनों से मोड़ें। दोनों हाथों को पीछे ले जाकर दोनों पैरों को टखनों से पकड़ें। रेचक करके हाथ से पकड़े हुए पैरों को कसकर धीरे-धीरे खींचें। जितना हो सके उतना सिर पीछे की ओर ले जाने की कोशिश करें। दृष्टि भी ऊपर एवं पीछे की ओर रहनी चाहिए। समग्र शरीर का बोझ केवल नाभिप्रदेश के ऊपर ही रहेगा। कमर से ऊपर का धड़ एवं कमर से नीचे पूरे पैर ऊपर की ओर मुड़े हुए रहेंगे।

कुम्भक करके इस स्थिति में टिके रहें। बाद में हाथ खोलकर पैर तथा सिर को मूल अवस्था में ले जायें और पूरक करें। प्रारंभ में पाँच सेकण्ड यह आसन करें। धीरे-धीरे समय बढ़ाकर तीन मिनट या उससे भी अधिक समय इस आसन का अभ्यास करें। तीन-चार बार यह आसन करना चाहिए।

लाभः धनुरासन के अभ्यास से पेट की चरबी कम होती है। गैस दूर होती है। पेट को रोग नष्ट होते हैं। कब्ज में लाभ होता है। भूख खुलती है। छाती का दर्द दूर होता है। हृदय की धडकन मजबूत बनती है। श्वास कि क्रिया व्यवस्थित चलती है। मुखाकृति सुंदर बनती है। आँखों की रोशनी बढ़ती है और तमाम रोग दूर होते हैं। हाथ-पैर में होने वाला कंपन रूकता है। शरीर का सौन्दर्य बढ़ता है। पेट के स्नायुओं में खिंचाव आने से पेट को अच्छा लाभ होता है। आँतों पर खूब दबाव पड़ने से पेट के अंगों पर भी दबाव पड़ता है। फलतः आँतों में पाचकरस आने लगता है इससे जठराग्नि तेज होती है, पाचनशक्ति बढ़ती है। वायुरोग नष्ट होता है। पेट के क्षेत्र में रक्त का संचार अधिक होता है। धनुरासन में भुजंगासन और शलभासन का समावेश हो जाने के कारण इन दोनों आसनों के लाभ मिलते हैं। स्त्रियों के लिए यह आसन खूब लाभकारक है। इससे मासिक धर्म के विकार, गर्भाशय के तमाम रोग दूर होते हैं।

चक्रासन

इस आसन में शरीर की आकृति चक्र जैसी बनती है। अतः चक्रासन कहा जाता है।



(चक्रासन)

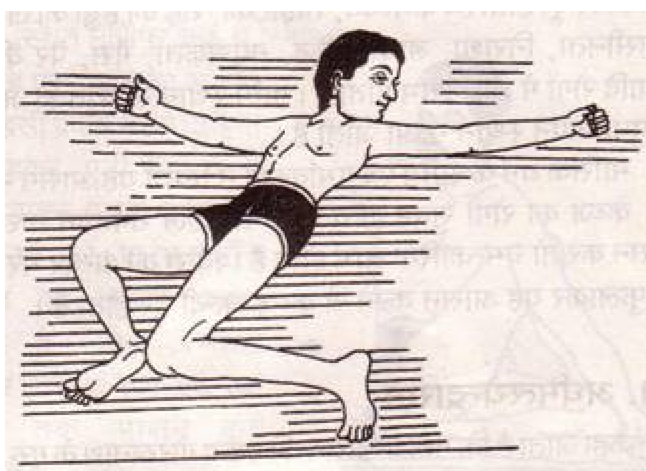
ध्यान मणिपुर चक्र में। श्वास दीर्घ, स्वाभाविक।

विधिः भूमि पर बिछे हुए आसन पर चित्त होकर लेट जायें। घुटनों से पैर मोड़ कर ऊपर उठायें। पैर के तलुवे ज़मीन से लगे रहें। दो पैरों के बीच करीब डेढ़ फीट का अन्तर रखें। दोनों हाथ मस्तक की तरफ उठाकर पीछे की ओर दोनों हथेलियों को ज़मीन पर जमायें। दोनों हथेलियों के बीच भी करीब डेढ़ फीट का अन्तर रखें। अब हाथ और पैर के बल से पूरे शरीर को कमर से मोड़कर ऊपर उठायें। हाथ को धीरे-धीरे पैर की ओर ले जाकर स्मपूर्श शरीर का आकार वृत्त या चक्र जैसा बनायें। आँखें बन्द रखें। श्वास की गति स्वाभाविक चलनें दें। चित्तवृत्ति मणिपुर चक्र (नाभि केन्द्र) में स्थिर करें। आँखें खुली भी रख सकते हैं। एक मिनट से पाँच मिनट तक अभ्यास बढ़ा सकते हैं।

लाभः मेरूदण्ड तथा शरीर की समस्त नाड़ियों का शुद्धिकरण होकर यौगिक चक्र जागृत होते हैं। लकवा तथा शरीर की कमजोरियाँ दूर होती हैं। मस्तक, गर्दन, पीठ, पेट, कमर, हाथ, पैर, घुटने आदि सब अंग मजबूत बनते हैं। सन्धि स्थानों दर्द नहीं होता। पाचनशक्ति बढ़ती है। पेट की अनावश्यक चरबी दूर होती है। शरीर तेजस्वी और फुर्तीला बनता है। विकारी विचार नष्ट होते हैं। स्वप्नदोष की बीमारी अलविदा होती है। चक्रासन के नियमित अभ्यास से वृद्धावस्था में कमर झुकती नहीं। शरीर सीधा तना हुआ रहता है।

कटिपिण्डमर्दनासन

इस आसन में कटिप्रदेश (कमर के पास वाले भाग) में स्थित पिण्ड अर्थात मूत्रपिण्ड का मर्दन होता है, इससे यह आसन कटिपिण्डमर्दनासन कहलाता है।



(कटिपिण्डमर्दनासन)

ध्यान स्वाधिष्ठान चक्र में। श्वास पूरक और कुम्भक।

विधिः बिछे हुए कम्बल पर पीठ के बल चित्त होकर लेट जायें। दोनों हाथों को आमने-सामने फैला दें। मुट्ठियाँ बन्द रखें। दोनों पैरों को घुटनों से मोड़कर खड़े कर दें। पैर के तलवे ज़मीन से लगे रहें। दोनों पैरों के बीच इतना अन्तर रखें कि घुटनों को ज़मीन पर झुकाने से एक पैर का घुटना दूसरे पैर की एड़ी को लगें... सिर दायीं ओर मुड़े तो दोनों घुटने दाहिनी ओर ज़मीन को लगें। इस प्रकार 15-20 बार क्रिया करें। इस प्रकार दोनों पैरों को एक साथ रखकर भी क्रिया करें।

लाभः जिसको पथरी की तकलीफ हो उसे आश्रम (संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमति, अमदावाद-5) से बिना मूल्य मिलती काली भस्म करीब डेढ़ ग्राम, भोजन से आधा घण्टा पूर्व और भोजन के बाद एक गिलास पानी के साथ लेना चाहिए और यह आसन भूखे पेट ठीक ढंग से करना चाहिए। इससे पथरी के दर्द में लाभ होता है। पथरी टुकड़े-टुकड़े होकर मूत्र के द्वारा बाहर निकलने लगती है। मूत्रविकार दूर होता है। कमर दर्द, साइटिका, रीढ़ की हड्डी की जकड़न, उदासीनता, निराशा, डायाबिटीजं, नपुंसकता, गैस, पैर की गाँठ इत्यादि रोगों में शीघ्र लाभ होता है। नाभि स्थान से च्युत हो जाती हो तो पुनः अपने स्थान में आ जाती है।

मासिक धर्म के समय एवं गर्भावस्था में स्त्रियाँ यह आसन न करें। कब्ज का रोगी सुबह शौच जाने से पहले उषःपान करके यह आसन करे तो चमत्कारिक लाभ होता है। श्वास को अन्दर भर के पेट को फुलाकर यह आसन करने से कब्ज जल्दी दूर होता है।

अर्धमत्स्येन्द्रासन

कहा जाता है कि मत्स्येन्द्रासन की रचना गोरखनाथ के गुरू स्वामी मत्स्येन्द्रनाथ ने की थी। वे इस आसन में ध्यान किया करते थे। मत्स्येन्द्रासन की आधी क्रियाओं को लेकर अर्धमत्स्येन्द्रासन प्रचलित हुआ है।



(अर्धमत्स्येन्द्रासन)

ध्यान अनाहत चक्र में। श्वास दीर्घ।

विधिः दोनों पैरों को लम्बे करके आसन पर बैठ जाओ। बायें पैर को घुटने से मोड़कर एड़ी गुदाद्वार के नीचे जमायें। पैर के तलवे को दाहिनी जंघा के साथ लगा दें। अब दाहिने पैर को घुटने से मोड़कर खड़ा कर दें और बायें पैर की जंघा से ऊपर ले जाते हुए जंघा के पीछे ज़मीन के ऊपर ऱख दें। आसन के लिए यह पूर्वभूमिका तैयार हो गई।

अब बायें हाथ को दाहिने पैर के घुटने से पार करके अर्थात घुटने को बगल में दबाते हुए बायें हाथ से दाहिने पैर का अंगूठा पकड़ें। धड़ को दाहिनी ओर मोड़ें जिससे दाहिने पैर के घुटने के ऊपर बायें कन्धे का दबाव ठीक से पड़े। अब दाहिना हाथ पीठ के पीछे से घुमाकर बायें पैर की जांघ का निम्न भाग पकड़ें। सिर दाहिनी ओर इतना घुमायें कि ठोड़ी और बायाँ कन्धा एक सीधी रेखा में आ जाय। छाती बिल्कुल तनी हुई रखें। नीचे की ओर झुके नहीं। चित्तवृत्ति नाभि के पीछें के भाग में स्थित मणिपुर चक्र में स्थिर करें।

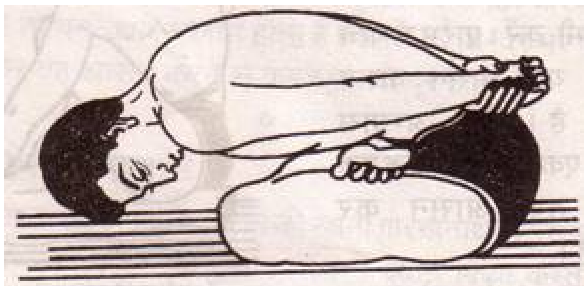
यह एक तरफ का आसन हुआ। इसी प्रकार पहले दाहिना पैर मोड़कर, एड़ी गुदाद्वार के नीचे दबाकर दूसरी तरफ का आसन भी करें। प्रारम्भ में पाँच सेकण्ड यह आसन करना पर्याप्त है। फिर अभ्यास बढ़ाकर एक एक तरफ एक एक मिनट तक आसन कर सकते हैं।

लाभः अर्धमत्स्येन्द्रासन से मेरूदण्ड स्वस्थ रहने से यौवन की स्फूर्ति बनी रहती है। रीढ़ की हड्डियों के साथ उनमें से निकलने वाली नाडियों को भी अच्छी कसरत मिल जाती है। पेट के विभिन्न अंगों को भी अच्छा लाभ होता है। पीठ, पेट के नले, पैर, गर्दन,

हाथ, कमर, नाभि से नीचे के भाग एवं छाती की नाड़ियों को अच्छा खिंचाव मिलने से उन पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। फलतः बन्धकोष दूर होता है। जठराग्नि तीव्र होती है। विकृत यकृत, प्लीहा तथा निष्क्रिय वृक्क के लिए यह आसन लाभदायी है। कमर, पीठ और सन्धिस्थानों के दर्द जल्दी दूर हो जाते हैं।

योगमुद्रासन

योगाभ्यास में यह मुद्रा अति महत्त्वपूर्ण है, इससे इसका नाम योगमुद्रासन रखा गया है।



(योगमुद्रासन)

ध्यान मणिपुर चक्र में। श्वास रेचक, कुम्भक और पूरक।

विधिः पद्मासन लगाकर दोनों हाथों को पीठ के पीछे ले जायें। बायें हाथ से दाहिने हाथ की कलाई पकड़ें। दोनों हाथों को खींचकर कमर तथा रीढ़ के मिलन स्थान पर ले जायें। अब रेचक करके कुम्भक करें। श्वास को रोककर शरीर को आगे झुकाकर भूमि पर टेक दें। फिर धीरे-धीरे सिर को उठाकर शरीर को पुनः सीधा कर दें और पूरक करें। प्रारंभ में यह आसन कठिन लगे तो सुखासन या सिद्धासन में बैठकर करें। पूर्ण लाभ तो पद्मासन में बैठकर करने से ही होता है। पाचनतन्त्र के अंगों की स्थानभ्रष्टता ठीक करने के लिए यदि यह आसन करते हों तो केवल पाँच-दस सेकण्ड तक ही करें, एक बैठक में तीन से पाँच बार। सामान्यतः यह आसन तीन मिनट तक करना चाहिए। आध्यात्मिक उद्देश्य से योगमुद्रासन करते हों तो समय की अवधि रूचि और शक्ति के अनुसार बढ़ायें।

लाभः योगमुद्रासन भली प्रकार सिद्ध होता है तब कुण्डलिनि शक्ति जागृत होती है। पेट की गैस की बीमारी दूर होती है। पेट एवं आँतों की सब शिकायतें दूर होती हैं। कलेजा, फेफड़े, आदि यथा स्थान रहते हैं। हृदय मजबूत बनता है। रक्त के विकार दूर होते

हैं। कुष्ठ और यौनविकार नष्ट होते हैं। पेट बड़ा हो तो अन्दर दब जाता है। शरीर मजबूत बनता है। मानसिक शक्ति बढ़ती है।

योगमुद्रासन से उदरपटल सशक्त बनता है। पेट के अंगों को अपने स्थान टिके रहने में सहायता मिलती है। नाड़ीतंत्र और खास करके कमर के नाड़ी मण्डल को बल मिलता है।

इस आसन में ,सामन्यतः जहाँ एड़ियाँ लगती हैं वहाँ कब्ज के अंग होते हैं। उन पर दबाव पड़ने से आँतों में उत्तेजना आती है। पुराना कब्ज दूर होता है। अंगों की स्थानभ्रष्टता के कारण होने वाला कब्ज भी, अंग अपने स्थान में पुनः यथावत स्थित हो जाने से नष्ट हो जाता है। धातु की दुर्बलता में योगमुद्रासन खूब लाभदायक है।

गोरक्षासन या भद्रासन



(गोरक्षासन या भद्रासन)

ध्यान मूलाधार चक्र में। श्वास प्रथम स्थिति में पूरक और दूसरी स्थिति में कुम्भक।

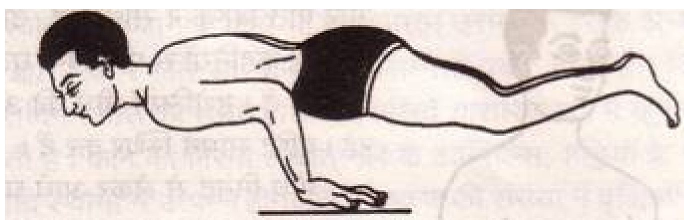
विधिः बिछे हुए आसन पर बैठ जायें। दाहिना पैर घुटने से मोड़कर एड़ी सीवन (उपस्थ और गुदा के मध्य) के दाहिने भाग में और बायाँ पैर मोड़कर एड़ी सीवन के बायें भाग में इस प्रकार रखें कि दोनों पैर के तलवे एक दूसरे को लगकर रहें।

रेचक करके दोनों हाथ सामने ज़मीन पर टेककर शरीर को ऊपर उठायें और दोनों पैर के पंजों पर इस प्रकार बैठें कि शरीर का वजन एड़ी के मध्य भाग में आये। अंगुलियों वाला भाग छूटा रहे। अब पूरक करते-करते दोनों हाथों की हथेलियों को घुटनों पर रखें।

अन्त में कुम्भक करके ठोड़ी छाती पर दबायें। चित्तवृत्ति मूलाधार चक्र में और दृष्टि भी उसी दिशा में लगायें। क्रमशः अभ्यास बढ़ाकर दसके मिनट तक यह आसन करें।

लाभः इस आसन के अभ्यास से पैर के सब सन्धि स्थान तथा स्नायु सशक्त बनते हैं। वायु ऊर्ध्वगामी होकर जठराग्नि प्रदीप्त करता है। दिनों दिन जड़ता नष्ट होने लगती है। शरीर पतला होता है। संकल्पबल बढ़ता है। बुद्धि तीक्षण होती है। कल्पनाशक्ति का विकास होता है। प्राणापान की एकता होती है। नादोत्पत्ति होने लगती है। बिन्दु स्थिर होकर चित्त की चंचलता कम होती है। आहार का संपूर्णतया पाचन हो जाने के कारण मलमूत्र अल्प होने लगते हैं। शरीर शुद्धि होने लगती है। तन में स्फूर्ति एवं मन में प्रसन्नता अपने आप प्रकट होती है। स्नायु सुदृढ़ बनते हैं। धातुक्षय, गैस, मधुप्रमेह, स्वप्नदोष, अजीर्ण, कमर का दर्द, गर्दन की दुर्बलता, बन्धकोष, मन्दाग्नि, सिरदर्द, क्षय, हृदयरोग, अनिद्रा, दमा, मूर्छारोग, बवासीर, आंत्रपुच्छ, पाण्डुरोग, जलोदर, भगन्दर, कोढ़, उल्टी, हिचकी, अतिसार, आँव, उदररोग, नेत्रविकार आदि असंख्य रोगों में इस आसन से लाभ होते हैं।

मयूरासन



(मयूरासन)

इस आसन में मयूर अर्थात मोर की आकृति बनती है, इससे इसे मयूरासन कहा जाता है।

ध्यान मणिपुर चक्र में। श्वास बाह्य कुम्भक।

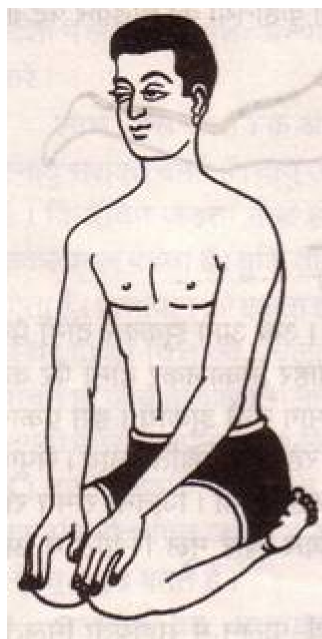
विधिः जमीन पर घुटने टिकाकर बैठ जायें। दोनों हाथ की हथेलियों को जमीन पर इस प्रकार रखें कि सब अंगुलियाँ पैर की दिशा में हों और परस्पर लगी रहें। दोनों कुहनियों को मोड़कर पेट के कोमल भाग पर, नाभि के इर्दगिर्द रखें। अब आगे झुककर दोनों पैर को पीछे की लम्बे करें। श्वास बाहर निकाल कर दोनों पैर को जमीन से ऊपर उठायें और सिर का भाग नीचे झुकायें। इस प्रकार पूरा शरीर ज़मीन के बराबर समानान्तर रहे ऐसी स्थिति बनायें। संपूर्ण शरीर का वजन केवल दो हथेलियों पर ही

रहेगा। जितना समय रह सकें उतना समय इस स्थिति में रहकर फिर मूल स्थिति में आ जायें। इस प्रकार दो-तीन बार करें।

लाभः मयूरासन करने से ब्रह्मचर्य-पालन में सहायता मिलती है। पाचन तंत्र के अंगों की रक्त का प्रवाह अधिक बढ़ने से वे अंग बलवान और कार्यशील बनते हैं। पेट के भीतर के भागों में दबाव पड़ने से उनकी शक्ति बढ़ती है। उदर के अंगों की शिथिलता और मन्दाग्नि दूर करने में मयूरासन बहुत उपयोगी है।

वज्रासन

वज्रासन का अर्थ है बलवान स्थिति। पाचनशक्ति, वीर्यशक्ति तथा स्नायुशक्ति देने वाला होने से यह आसन वज्रासन कहलाता है।



(वज्रासन)

ध्यान मूलाधार चक्र में और श्वास दीर्घ।

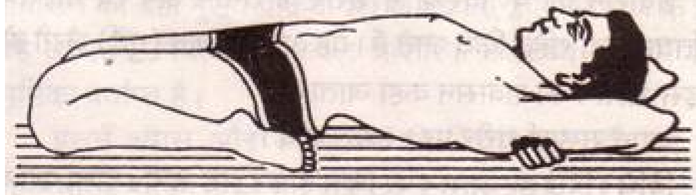
विधिः बिछे हुए आसन पर दोनों पैरों को घुटनों से मोड़कर एड़ियों पर बैठ जायें। पैर के दोनों अंगूठे परस्पर लगे रहें। पैर के तलवों के ऊपर नितम्ब रहे। कमर और पीठ बिल्कुल सीधी रहे, दोनों हाथ को कुहनियों से मोड़े बिना घुटनों पर रख दें। हथेलियाँ नीचे की ओर रहें। दृष्टि सामने स्थिर कर दें।

पाँच मिनट से लेकर आधे घण्टे तक वज्रासन का अभ्यास कर सकते हैं। वज्रासन लगाकर भूमि पर लेट जाने से सुप्त वज्रासन होता है।

लाभः वज्रासन के अभ्यास से शरीर का मध्यभाग सीधा रहता है। श्वास की गति मन्द पड़ने से वायु बढ़ती है। आँखों की ज्योति तेज होती है। वज्रनाड़ी अर्थात वीर्यधारा नाड़ी मजबूत बनती है। वीर्य की ऊर्ध्वगति होने से शरीर वज्र जैसा बनता है। लम्बे समय तक सरलता से यह आसन कर सकते हैं। इससे मन की चंचलता दूर होकर व्यक्ति स्थिर बुद्धिवाला बनता है। शरीर में रक्ताभिसरण ठीक से होकर शरीर निरोगी एवं सुन्दर बनता है।

भोजन के बाद इस आसन से बैठने से पाचन शक्ति तेज होती है। कब्ज दूर होती है। भोजन जल्दी हज्म होता है। पेट की वायु का नाश होता है। कब्ज दूर होकर पेट के तमाम रोग नष्ट होते हैं। पाण्डुरोग से मुक्ति मिलती है। रीढ़, कमर, जाँघ, घुटने और पैरों में शक्ति बढ़ती है। कमर और पैर का वायु रोग दूर होता है। स्मरणशक्ति में वृद्धि होती है। स्त्रियों के मासिक धर्म की अनियमितता जैसे रोग दूर होते हैं। शुक्रदोष, वीर्यदोष, घुटनों का दर्द आदि का नाश होता है। स्नायु पुष्ट होते हैं। स्फूर्ति बढ़ाने के लिए एवं मानसिक निराशा दूर करने के लिए यह आसन उपयोगी है। ध्यान के लिये भी यह आसन उत्तम है। इसके अभ्यास से शारीरिक स्फूर्ति एवं मानसिक प्रसन्नता प्रकट होती है। दिन-प्रतिदिन शक्ति का संचय होता है इसलिए शारीरिक बल में खूब वृद्धि होती है। काग का गिरना अर्थात गले के टान्सिल्स, हड्डियों के पोल आदि स्थानों में उत्पन्न होने वाले श्वेतकण की संख्या में वृद्धि होने से आरोग्य का साम्राज्य स्थापित होता है। फिर व्यक्ति बुखार से सिरदर्द से, कब्ज से, मंदाग्नि से या अजीर्ण जैसे छोटे-मोटे किसी भी रोग से पीड़ित नहीं रहता, क्योंकि रोग आरोग्य के साम्राज्य में प्रविष्ट होने का साहस ही नहीं कर पाते।

सुप्तवज्रासन



(सुप्तवज्रासन)

ध्यान विशुद्धाख्याचक्र में। श्वास दीर्घ, सामान्य।

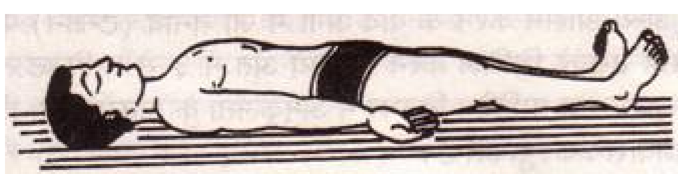
विधिः वज्रासन में बैठने के बाद चित्त होकर पीछे की ओर भूमि पर लेट जायें। दोनों जंघाएँ परस्पर मिली रहें। अब रेचक करते बायें हाथ का खुला पंजा दाहिने कन्धे के नीचे इस प्रकार रखें कि मस्तक दोनों हाथ के क्रास के ऊपर आये। रेचक पूरा होने पर त्रिबन्ध करें। दृष्टि मूलाधार चक्र की दिशा में और चित्तवृत्ति मूलाधार चक्र में स्थापित करें।

लाभः यह आसन करने में श्रम बहुत कम है और लाभ अधिक होता है। इसके अभ्यास से सुषुम्ना का मार्ग अत्यन्त सरल होता है। कुण्डलिनी शक्ति सरलता से ऊर्ध्वगमन कर सकती है।

इस आसन में ध्यान करने से मेरूदण्ड को सीधा करने का श्रम नहीं करना पड़ता और मेरूदण्ड को आराम मिलता है। उसकी कार्य़शक्ति प्रबल बनती है। इस आसन का अभ्यास करने से प्रायः तमाम अंतःस्रावी ग्रन्थियों को, जैसे शीर्षस्थ ग्रन्थि, कण्ठस्थ ग्रन्थि, मूत्रपिण्ड की ग्रन्थी, ऊर्ध्वपिण्ड तथा पुरूषार्थ ग्रन्थि आदि को पुष्टि मिलती है। फलतः व्यक्ति का भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास सरल हो जाता है। तन-मन का स्वास्थ्य प्रभावशाली बनता है। जठराग्नि प्रदीप्त होती है। मलावरोध की पीडा दूर होती है। धातुक्षय, स्वप्नदोष, पक्षाघात, पथरी, बहरा होना, तोतला होना, आँखों की दुर्बलता, गले के टान्सिल, श्वासनलिका का सूजन, क्षय, दमा, स्मरणशक्ति की दुर्बलता आदि रोग दूर होते हैं।

शवासन

शवासन की पूर्णावस्था में शरीर के तमाम अंग एवं मस्तिष्क पूर्णतया चेष्टा रहित किये जाते हैं। यह अवस्था शव (मुर्दे) जैसी होने से इस आसन को शवासन कहा जाता है।



(शवासन)

विधिः बिछे हुए आसन पर चित्त होकर लेट जायें। दोनों पैरों को परस्पर से थोड़े अलग कर दें। दोनों हाथ भी शरीर से थोड़े अलग रहें। इस प्रकार पैरों की ओर फैला दें। हाथ की हथेलियाँ आकाश की तरफ खुली रखें। सिर सीधा रहे। आँखें बन्द।

मानसिक दृष्टि से शरीर को पैर से सिर तक देखते जायें। पूरे शरीर को मुर्दे की तरह ढीला छोड़ दें। हर एक अंग को शिथिल करते जायें।

शरीर में सम्पूर्ण विश्राम का अनुभव करें। मन को भी बाह्य विषयों से हटाकर एकाग्र करें। बारी-बारी से हर एक अंग पर मानसिक दृष्टि एका्ग्र करते हुए भावना करें कि वह अंग अब आराम पा रहा है। मेरी सब थकान उतर रही है। इस प्रकार भावना करते-करते सब स्नायुओं को शिथिल होने दें। शरीर के एक भी अंग में कहीं भी तनाव (टेन्शन) न रहे। शिथिलीकरण की प्रक्रिया में पैर से प्रारम्भ करके सिर तक जायें अथवा सिर से प्रारम्भ करके पैर तक भी जा सकते हैं। अन्त में, जहाँ से प्रारम्भ किया हो वहीं पुनः पहुँचना चाहिये। शिथिलीकरण की प्रक्रिया से शरीर के तमाम अंगों का एवं ज्ञानतंतुओं को विश्राम की अवस्था में ला देना है।

शवासन की दूसरी अवस्था में श्वासोच्छोवास पर ध्यान देना है। शवासन की यही मुख्य प्रक्रिया है। विशेषकर, योग साधकों के लिए वह अत्यन्त उपयोगी है। केवल शारीरिक स्वास्थ्य के लिये प्रथम भूमिका पर्याप्त है।

इसमें श्वास और उच्छवास की नियमितता, दीर्घता और समानता स्थापित करने का लक्षय है। श्वास नियमित चले, लम्बा और गहरा चले, श्वास और उच्छवास एक समान रहे तो मन को एकाग्र करने की शक्ति प्राप्त होती है।

शवासन यदि ठीक ढंग से किया जाए तो नाड़ीतंत्र इतना शांत हो जाता है कि अभ्यासी को नींद आने लगती है। लेकिन ध्यान रहे, निन्द्रित न होकर जाग्रत रहना आवश्यक है।

अन्य आसन करने के बाद अंगों में जो तनाव (टेन्शन) पैदा होता है उसको शिथिल करने के लिये अंत में 3 से 5 मिनट तक शवासन करना चाहिए। दिनभर में अनुकूलता के अनुसार दो-तीन बार शवासन कर सकते हैं।

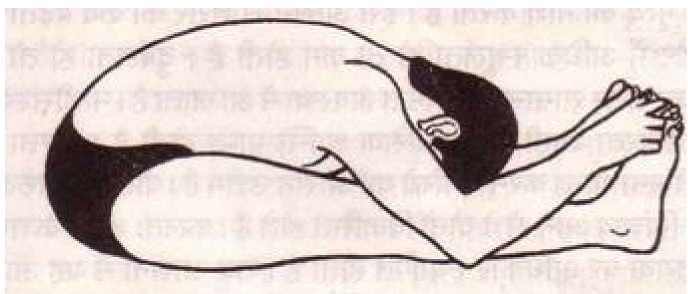
लाभः शवासन के द्वारा स्नायु एवं मांसपेशियों में शिथिलीकरण से शक्ति बढ़ती है। अधिक कार्य करने की योग्यता उसमें आती है। रक्तवाहनियों में, शिराओं में रक्तप्रवाह तीव्र

होने से सारी थकान उतर जाती है। नाड़ीतंत्र को बल मिलता है। मानसिक शक्ति में वृद्धि होती है।

रक्त का दबाव कम करने के लिए, नाड़ीतंत्र की दुर्बलता एवं उसके कारण होने वाले रोगों को दूर करने के लिये शवासन खूब उपयोगी है।

पादपश्चिमोत्तानासन

यह आसन करना कठिन है इससे उग्रासन कहा जाता है। उग्र का अर्थ है शिव। भगवान शिव संहारकर्त्ता हैं अतः उग्र या भयंकर हैं। शिवसंहिता में भगवान शिव ने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा करते हुए कहा हैः यह आसन सर्वश्रेष्ठ आसन है। इसको प्रयत्नपूर्वक गुप्त रखें। सिर्फ अधिकारियों को ही इसका रहस्य बतायें।



(पादपश्चिमोत्तानासन या उग्रासन)

ध्यान मणिपुर चक्र में। श्वास प्रथम स्थिति में पूरक और दूसरी स्थिति में रेचक और फिर बहिर्कुम्भक।

विधिः बिछे हुए आसन पर बैठ जायें। दोनों पैरों को लम्बे फैला दें। दोनों पैरों की जंघा, घुटने, पंजे परस्पर मिले रहें और जमीन के साथ लगे रहें। पैरों की अंगुलयाँ घुटनों की तरफ झुकी हुई रहें। अब दोनों हाथ लम्बे करें। दाहिने हाथ की तर्जनी और अंगूठे से दाहिने पैर का अंगूठा और बायें हाथ की तर्जनी और अंगूठे से बायें पैर का अंगूठा पकड़ें। अब रेचक करते-करते नीचे झुकें और सिर को दोनों घुटनों के मध्य में रखें। ललाट घुटने को स्पर्श करे और घुटने ज़मीन से लगे रहें। रेचक पूरा होने पर कुम्भक करें। दृष्टि एवं चित्तवृत्ति को मणिपुर चक्र में स्थापित करें। प्रारम्भ में आधा मिनट करके क्रमशः 15 मिनट तक यह आसन करने का अभ्यास बढ़ाना चाहिये। प्रथम दो-चार दिन कठिन लगेगा लेकिन अभ्यास हो जाने पर यह आसन सरल हो जाएगा।

लाभः पादपश्चिमोत्तनासन मे सम्यक अभ्यास से सुषुम्ना का मुख खुल जाता है और प्राण मेरूदण्ड के मार्ग में गमन करता है, फलतः बिन्दु को जीत सकते हैं। बिन्दु को जीते बिना न समाधि सिद्ध होती है न वायु स्थिर होता है न चित्त शांत होता है।

जो स्त्री-पुरूष काम विकार से अत्यंत पीड़ित हों उन्हें इस आसन का अभ्यास करना चाहिए। इससे शारीरिक विकार दब जाते हैं। उदर, छाती और मेरूदण्ड को उत्तम कसरत मिलती है अतः वे अधिक कार्यक्षम बनते हैं। हाथ, पैर तथा अन्य अंगों के सन्धि स्थान मजबूत बनते हैं। शरीर के सब तंत्र बराबर कार्यशील होते हैं। रोग मात्र का नाश होकर स्वास्थ्य़ का साम्राज्य स्थापित होता है।

इस आसन के अभ्यास से मन्दाग्नि, मलावरोध, अजीर्ण, उदररोग, कृमिविकार, सर्दी, वातविकार, कमर का दर्द, हिचकी, कोढ़, मूत्ररोग, मधुप्रमेह, पैर के रोग, स्वप्नदोष, वीर्यविकार, रक्तविकार, एपेन्डीसाइटिस, अण्डवृद्धि, पाण्डूरोग, अनिद्रा, दमा, खट्टी डकारें आना, ज्ञानतन्तु की दुर्बलता, बवासीर, नल की सूजन, गर्भाशय के रोग, अनियमित तथा कष्टदायक मासिक, बन्ध्यत्व, प्रदर, नपुंसकता, रक्तपित्त, सिरोवेदना, बौनापन आदि अनेक रोग दूर होते हैं। पेट पतला बनता है। जठराग्नि प्रदीप्त होती है। कफ और चरबी नष्ट होते हैं।

शिवसंहिता में कहा है कि इस आसन से वायूद्दीपन होता है और वह मृत्यु का नाश करता है। इस आसन से शरीर का कद बढ़ता है। शरीर में अधिक स्थूलता हो तो कम होती है। दुर्बलता हो तो वह दूर होकर शरीर सामान्य तन्दुरूस्त अवस्था में आ जाता है। नाडी संस्थान में स्थिरता आती है। मानसिक शांति प्राप्त होती है। चिन्ता एवं उत्तेजना शांत करने के लिए यह आसन उत्तम है। पीठ और मेरूदण्ड पर खिंचाव आने से दोनों विकसित होते हैं। फलतः शरीर के तमाम अवयवों पर अधिकार स्थापित होता है। सब आसनों में यह आसन सर्वप्रधान है। इसके अभ्यास से कायाकल्प (परिवर्तन) हो जाता है।

यह आसन भगवान शिव को बहुत प्यारा है। उनकी आज्ञा से योगी गोरखनाथ ने लोककल्याण हेतु इसका प्रचार किया है। आप इस आसन के अदभुत लाभों से लाभान्वित हों और दूसरों को भी सिखायें।

पादपश्चिमोत्तानासन पूज्यपाद आसारामजी बापू को भी बहुत प्यारा है। उससे पूज्यश्री को बहुत लाभ हुए हैं। अभी भी यह आसन उनके आरोग्यनिधि का रक्षक बना हुआ है।

पाठक भाइयों! आप अवश्य इस आसन का लाभ लेना। प्रारम्भ के चार-पाँच दिन जरा कठिन लगेगा। बाद में तो यह आसन आपका शिवजी के वरदान रूप आरोग्य कवच सिद्ध हुए बिना नहीं रहेगा।

त्रिबन्ध

मूलबन्ध

शौच स्नानादि से निवृत्त होकर आसन पर बैठ जायें। बायीं एड़ी के द्वारा सीवन या योनि को दबायें। दाहिनी एड़ी सीवन पर रखें। गुदाद्वार को सिकोड़कर भीतर की ओर ऊपर खींचें। यह मूलबन्ध कहा जाता है।

लाभः मूलबन्ध के अभ्यास से मृत्यु को जीत सकते हैं। शरीर में नयी ताजगी आती है। बिगड़ते हुए स्वास्थ्य की रक्षा होती है। ब्रह्मचर्य का पालन करने में मूलबन्ध सहायक सिद्ध होता है। वीर्य को पुष्ट करता है, कब्ज को नष्ट करता है, जठराग्नि तेज होती है। मूलबन्ध से चिरयौवन प्राप्त होता है। बाल सफेद होने से रुकते हैं।

अपानवाय ऊर्ध्वगति पाकर प्राणवायु के सुषुम्ना में प्रविष्ट होता है। सहस्रारचक्र में चित्तवृत्ति स्थिर बनती है। इससे शिवपद का आनन्द मिलता है। सर्व प्रकार की दिव्य विभूतियाँ और ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं। अनाहत नाद सुनने को मिलता है। प्राण, अपान, नाद और बिनदु एकत्रित होने से योग में पूर्णता प्राप्त होती है।

उड्डीयान बन्ध

आसन पर बैठकर पूरा श्वास बाहर निकाल दें। सम्पर्णतया रेचक करें। पेट को भीतर सिकोड़कर ऊपर की ओर खींचें। नाभि तथा आँतें पीठ की तरफ दबायें। शरीर को थोड़ा सा आगे की तरफ झुकायें। यह है उड्डीयानबन्ध।

लाभः इसके अभ्यास से चिरयौवन प्राप्त होता है। मृत्यु पर जय प्राप्त होती है। ब्रह्मचर्य के पालन में खूब सहायता मिलती है। स्वास्थ्य सुन्दर बनता है। कार्यशक्ति में वृद्धि होती है। न्योलि और उड्डीयानबन्ध जब एक साथ किये जाते हैं तब कब्ज दुम दबाकर भाग खड़ा होता है। पेट के तमाम अवयवों की मालिश हो जाती है। पेट की अनावश्यक चरबी उतर जाती है।

जालन्धरबन्ध

आसन पर बैठकर पूरक करके कुम्भक करें और ठोड़ी को छाती के साथ दबायें। इसको जालन्धरबन्ध कहते हैं।

लाभः जालन्धरबन्ध के अभ्यास से प्राण का संचरण ठीक से होता है। इड़ा और पिंगला नाड़ी बन्द होकर प्राण-अपान सुषुम्ना में प्रविष्ट होते हैं। नाभि से अमृत प्रकट होता है जिसका पान जठराग्नि करता है। योगी इसके द्वारा अमरता प्राप्त करता है।

पद्मासन पर बैठ जायें। पूरा श्वास बाहर निकाल कर मूलबन्ध, उड्डीयानबन्ध करें। फिर खूब पूरक करके मूलबन्ध, उड्डीयानबन्ध और जालन्धरबन्ध ये तीनों बन्ध एक साथ करें। आँखें बन्द रखें। मन में प्रणव (ॐ) का अर्थ के साथ जप करें।

इस प्रकार प्राणायाम सहित तीनों बन्ध का एक साथ अभ्यास करने से बहुत लाभ होता है और प्रायः चमत्कारिक परिणाम आता है। केवल तीन ही दिन के सम्यक अभ्यास से जीवन में क्रान्ति का अनुभव होने लगता है। कुछ समय के अभ्यास से केवल या केवली कुम्भक स्वयं प्रकट होता है।

केवली कुम्भक

केवल या केवली कुम्भक का अर्थ है रेचक-पूरक बिना ही प्राण का स्थिर हो जाना। जिसको केवली कुम्भक सिद्ध होता है उस योगी के लिए तीनों लोक में कुछ भी दुर्लभ नहीं रहता। कुण्डलिनी जागृत होती है, शरीर पतला हो जाता है, मुख प्रसन्न रहता है, नेत्र मलरहित होते हैं। सर्व रोग दूर हो जाते हैं। बिन्दु पर विजय होती है। जठराग्नि प्रज्वलित होती है।

केवली कुम्भक सिद्ध किये हुए योगी की अपनी सर्व मनोकामनायें पूर्ण होती हैं। इतना ही नहीं, उसका पूजन करके श्रद्धावान लोग भी अपनी मनोकामनायें पूर्ण करने लगते हैं।

जो साधक पूर्ण एकाग्रता से त्रिबन्ध सहित प्राणायाम के अभ्यास द्वारा केवली कुम्भक का पुरूषार्थ सिद्ध करता है उसके भाग्य का तो पूछना ही क्या? उसकी व्यापकता

बढ़ जाती है। अन्तर में महानता का अनुभव होता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर इन छः शत्रुओं पर विजय प्राप्त होती है। केवली कुम्भक की महिमा अपार है।

जलनेति

विधिः एक लिटर पानी को गुनगुना सा गरम करें। उसमें करीब दस ग्राम शुद्ध नमक डालकर घोल दें। सैन्धव मिल जाये तो अच्छा। सुबह में स्नान के बाद यह पानी चौड़े मुँहवाले पात्र में, कटोरे में लेकर पैरों पर बैठ जायें। पात्र को दोनों हाथों से पकड़ कर नाक के नथुने पानी में डुबो दें। अब धीरे-धीरे नाक के द्वारा श्वास के साथ पानी को भीतर खींचें और नाक से भीतर आते हुए पानी को मुँह से बाहर निकालते जायें। नाक को पानी में इस प्रकार बराबर डुबोये रखें जिससे नाक द्वारा भीतर जानेवाले पानी के साथ हवा न प्रवेश करे। अन्यथा आँतरस-खाँसी आयेगी।

इस प्रकार पात्र का सब पानी नाक द्वारा लेकर मुख द्वारा बाहर निकाल दें। अब पात्र को रख कर खड़े हो जायें। दोनों पैर थोड़े खुले रहें। दोनों हाथ कमर पर रखकर श्वास को जोर से बाहर निकालते हुए आगे की ओर जितना हो सके झुकें। भस्त्रिका के साथ यह क्रिया बार-बार करें, इससे नाक के भीतर का सब पानी बाहर निकल जायेगा। थोड़ा बहुत रह भी जाये और दिन में कभी भी नाक से बाहर निकल जाये तो कुछ चिन्ताजनक नहीं है।

नाक से पानी भीतर खींचने की यह क्रिया प्रारम्भ में उलझन जैसी लगेगी लेकिन अभ्यास हो जाने पर बिल्कुल सरल बन जायेगा।

लाभः मस्तिष्क की ओर से एक प्रकार का विषैला रस नीचे की ओर बहता है। यह रस कान में आये तो कान के रोग होते हैं, आदमी बहरा हो जाता है। यह रस आँखों की तरफ जाये तो आँखों का तेज कम हो जाता है, चश्मे की जरूरत पड़ती है तथा अन्य रोग होते हैं। यह रस गले की ओर जाये तो गले के रोग होते हैं।

नियमपूर्वक जलनेति करने से यह विषैला पदार्थ बाहर निकल जाता है। आँखों की रोशनी बढ़ती है। चश्मे की जरूरत नहीं पड़ती। चश्मा हो भी तो धीरे-धीरे नम्बर कम होते-होते छूट जाता भी जाता है। श्वासोच्छोवास का मार्ग साफ हो जाता है। मस्तिष्क में ताजगी रहती है। जुकाम-सर्दी होने के अवसर कम हो जाते हैं। जलनेति की क्रिया करने

से दमा, टी.बी., खाँसी, नकसीर, बहरापन आदि छोटी-मोटी 1500 बीमीरियाँ दूर होती हैं। जलनेति करने वाले को बहुत लाभ होते हैं। चित्त में प्रसन्नता बनी रहती है।

गजकरणी

विधिः करीब दो लिटर पानी गुनगुना सा गरम करें। उसमें करीब 20 ग्राम शुद्ध नमक घोल दें। सैन्धव मिल जाये तो अच्छा है। अब पंजों के बल बैठकर वह पानी गिलास भर-भर के पीते जायें। खूब पियें। अधिकाअधिक पियें। पेट जब बिल्कुल भर जाये, गले तक आ जाये, पानी बाहर निकालने की कोशिश करें तब दाहिने हाथ की दो बड़ी अंगुलियाँ मुँह में डाल कर उल्टी करें, पिया हुआ सब पानी बाहर निकाल दें। पेट बिल्कुल हल्का हो जाये तब पाँच मिनट तक आराम करें।

गजकरणी करने के एकाध घण्टे के बाद केवल पतली खिचड़ी ही भोजन में लें। भोजन के बाद तीन घण्टे तक पानी न पियें, सोयें नहीं, ठण्डे पानी से स्नान करें। तीन घण्टे के बाद प्रारम्भ में थोड़ा गरम पानी पियें।

लाभः गजकरणी से एसिडीटी के रोगी को अदभुत लाभ होता है। ऐसे रोगी को चार-पाँच दिन में एक बार गजकरणी चाहिए। तत्पश्चात महीने में एक बार, दो महीने में एक बार, छः महीने में एक बार भी गजकरणी कर सकते हैं।

प्रातःकाल खाली पेट तुलसी के पाँच-सात पत्ते चबाकर ऊपर से थोड़ा जल पियें। एसीडीटी के रोगी को इससे बहुत लाभ होगा।

वर्षों पुराने कब्ज के रोगियों को सप्ताह में एक बार गजकरणी की क्रिया अवश्य करनी चाहिए। उनका आमाशय ग्रन्थिसंस्थान कमजोर हो जाने से भोजन हजम होने में गड़बड़ रहती है। गजकरणी करने से इसमें लाभ होता है। फोड़े, फुन्सी, सिर में गर्मी, सर्दी, बुखार, खाँसी, दमा, टी.बी., वात-पित्त-कफ के दोष, जिह्वा के रोग, गले के रोग, छाती के रोग, छाती का दर्द एवं मंदाग्नि में गजकरणी क्रिया लाभकारक है।

शरीर शोधन-कायाकल्प

यह चालीस दिन का कल्प है। पूज्यपाद आसारामजी बापू ने यह प्रयोग किया हुआ है। इससे शरीर सुडौल, स्वस्थ और फुर्तीला बनता है। रक्त में नये-नये कण बनते हैं, शरीर के कोषों की शक्ति बढ़ती है। मन-बुद्धि में चमत्कारिक लाभ होते हैं।

विधिः अगले दिन पपीता, सेव आदि फल उचित मात्रा में लें। अथवा मुनक्का 50 ग्राम दस घण्टे पहले भिगो दें। उनको उबालकर बीज निकाल दें। मुनक्का खा लें और पानी पी लें।

प्रातःकाल उठकर संकल्प करें कि इस कल्प के दौरान निश्चित किये हुए कार्यक्रम के अनुसार ही रहूँगा।

शौच-स्नानादि नित्यकर्म से निवृत्त होकर सुबह 8 बजे 200 या 250 ग्राम गाय का उबला हुआ गुनगुना दूध पियें। पौन घण्टा पूर्ण आराम करें। बाद में फिर से दूध पियें। शारीरिक श्रम कम से कम करें। ॐ सोऽहं हंसः इस मंत्र का मानसिक जप करें। कभी श्वास को निहारें। बस साक्षीभाव।

मनोराज्य चलता हो तो ॐ ... जोर-जोर से जप करें।

इस प्रकार शाम तक जितना दूध हजम कर सकें उतना दूध दो से तीन लिटर पियें। 40 दिन तक केवल दुग्धाहार के बाद 41वें दिन मूँग का उबला हुआ पानी, मोसम्मी का रस आदि लें। रात्रि को अधिक मूँगवाली हल्की खिचड़ी खायें। इस प्रकार शरीर-शोधन-कायाकल्प की पूर्णाहूति करें।

यदि बुद्धि तीक्षण बनानी हो, स्मरणशक्ति बढ़ानी हो, तो कल्प के दौरान ॐ ऐं नमः इस मंत्र का जप करें। सूर्य को अर्घ्य दें।

इस कल्प में दूध के सिवाय अन्य कोई खुराक लेना मना है। चाय, तम्बाकू आदि व्यसन निषिद्ध हैं। स्त्रियों के संग से दूर रहना तथा ब्रह्मचर्य का पालन अत्यन्त आवश्यक है।

कलजुग नहीं..... करजुग है यह

कलजुग नहीं करजुग है यह, यहाँ दिन को दे अरु रात ले।

क्या खूब सौदा नकद है, इस हाथ दे उस हाथ ले।। टेक

दुनियाँ अजब बाज़ार है, कुछ जिन्स[1] यां कि साथ ले।

नेकी का बदला नेक है, बद से बदी की बात ले।।

मेवा खिला, मेवा मिले, फल फूल दे, फल पात ले।

आराम दे, आराम ले, दुःख दर्द दे, आफत[2] ले।। 1 ।।

काँटा किसी को मत लगा गो मिस्ले-गुल[3] फूला है तू।

वह तेरे हक[4] में तीर है, किस बात पर झूला है तू।।

मत आग में डाल और को, क्या घास का पूला है तू।

सुन ऱख यह नकता[5] बेखबर, किस बात पर भूला है तू।।

कलजुग नहीं...।। 2 ।।

शोखी शरारत मकरो-फन[6] सबका बसेखा[7] है यहाँ।

जो जो दिखाया और को, वह खुद भी देखा है यहाँ।।

खोटी खरी जो कुछ कही, तिसका परेखा[8] है यहाँ।

जो जो पड़ा तुलता है मोल, तिल तिल का लेखा है यहाँ।।

कलजुग नहीं...।। 3 ।।

जो और की बस्ती[9] रखे, उसका भी बसता है पूरा।

जो और के मारे छुरी, उसको भी लगता है छुरा।।

जो और की तोड़े घड़ी, उसका भी टूटे है घड़ा।

जो और की चेते[10] बदी, उसका भी होता है बुरा।।

कलजुग नहीं... ।। 4 ।।

जो और को फल देवेगा, वह भी सदा फल पावेगा।

गेहूँ से गेहूँ, जौ से जौ, चाँवल से चाँवल पावेगा।।

जो आज देवेगा, यहाँ, वैसा ही वह कल पावेगा।

कल देवेगा, कल पावेगा, फिर देवेगा, फिर पावेगा।।

कलजुग नहीं... ।। 5 ।।

जो चाहे ले चल इस घड़ी, सब जिन्स यहाँ तैयार है।

आराम में आराम है, आजार में आजार[11] है।।

दुनियाँ न जान इसको मियाँ, दरया की यह मझधार है।

औरों का बेड़ा पार कर, तेरा भी बेड़ा पार है।।

कलजुग नहीं... ।। 6 ।।

तू और की तारीफ कर, तुझको सनाख्वानी[12] मिले।

कर मुश्किल आसां औरों की, तुझको, भी आसानी मिले।।

तू और को मेहमान कर, तुझको भी मेहमानी मिले।

रोटी खिला रोटी मिले, पानी पिला पानी मिले।।

कलजुग नहीं... ।। 7 ।।

जो गुल[13] खिलावे और का उसका ही गुल खिलता भी है।

जो और का कीले[14] है मुँह, उसका ही मुँह किलता भी है।।

जो और का छीले जिगर, उसका जिगर छिलता भी है।

जो और को देवे कपट, उसको कपट मिलता भी है।।

कलजुग नहीं... ।। 8 ।।

कर जो कुछ करना है अब, यह दम तो कोई आन[15] है।

नुकसान में नुकसान है, एहसान में एहसान है।।

तोहमत में यहाँ तोहमत मिले, तूफान में तूफान है।

रेहमान[16] को रहमान[17] है, शैतान को शैतान है।।

कलजुग नहीं... ।। 9 ।।

यहाँ जहर दे तो जहर ले, शक्कर में शक्कर देख ले।

नेकों का नेकी का मजा, मूजी[18] को टक्कर देख ले।।

मोती दिये मोती मिले, पत्थर में पत्थर देख ले।

गर तुझको यह बावर[19] नहीं तो तू भी करके देख ले।।

कलजुग नहीं... ।। 10 ।।

अपने नफे के वास्ते, मत और का नुकसान कर।

तेरा भी नुकसां होवेगा, इस बात पर तू ध्यान कर।।

खाना जो खा सो देखकर, पानी पिये तो छानकर।

यां पाँवों को रख फूँककर, और खोफ से गुजरान कर।।

कलजुग नहीं... ।। 11 ।।

गफलत की यह जगह नहीं, तू साहिबे-इदराक[20] रह।

दिलशाद[21] ऱख दिल शाह रह, गमनाक रख गमनाक रह।।

हर हाल में भी तू नजीर[22] अब हर कदम की रह।

यह वह मकां है ओ मियाँ! याँ पाक[23] रह बेबाक[24] रह।।

कलजुग नहीं... ।। 12 ।।

1. वस्तु 2. मुसीबत, 3. पुष्प की तरह 4. तेरे लिये 5. रहस्य 6. दगा-धोखा 7. घर 8. परखना 9. नगरी 10. विचार करें 11. दुःख 12. तारीफ-स्तुति 13. फूल 14. किसी को बोलने न देना 15. घड़ी, पल 16. दयावान 17. दयालु भगवान 18. सताने वाला 19. विश्वास 20. तीव्र दृष्टा, तेज समझने वाला पुरूष 21. प्रसन्नचित्त 22. कवि का नाम है 23. शुद्ध पवित्र 24 निडर।

****